साहित्य एवं मनोविज्ञान का अंतर्संबंध

डॉ. रेनू यादव
फेकल्टी असोसिएट
भारतीय भाषा एवं साहित्य विभाग (हिन्दी),
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय, यमुना एक्सप्रेस-वे,
ग्रेटर नोएडा. पिन – 201312 (उ.प्र.)
फोन – 09810703368
ई-मेल –renuyadav0584@gmail.com

डॉ. रेनू यादव, साहित्य एवं मनोविज्ञान का अंतर्संबं,आखर हिंदी पत्रिका,खंड 1/अंक 1/सितंबर 2011,(10-18)

साहित्य मन का सहचर है और मन साहित्य का उद्‌गम स्थान । मन की भूमिका के बिना साहित्य की कल्पना नहीं की जा सकती । हर मन में थोड़ा या बहुत साहित्य अवश्य बसता है, किंतु यह आवश्यक नहीं कि हर कोई अपनी अभिव्यक्ति को शब्द दे सके । मनोविश्लेषणवाद के जनक सिगमंड फ्रॉयड के अनुसार मन की तीन अवस्थाएँ चेतन, अवचेतन तथा अचेतन में से अवचेतन मन में दीर्घकालीन याददास्त, संवेद और एहसास, आदत, लत एवं सहसम्बन्ध, तादात्मीकरण, रचनात्मकता, परासंपर्क, प्रज्ञा आदि समाहित है और इसकी (अवचेतन मन) अभिव्यक्तियाँ इदम्, अहम, पराअहम् साहित्य सृजन में सहयोग करती हैं । साहित्य सृजन एक दिन में नहीं हो सकता, यह मन में चलने वाली लम्बी प्रक्रिया का परिणाम होता है । साहित्य अथवा किसी भी रचना या कला के उद्‌गम को समझने के लिए सिर्फ फ्रॉयड के सिद्‌धांत को ही नहीं बल्कि अल्फ्रेड एडलर और युंग के सिद्‌धांतों पर भी दृष्टिपात करना होगा ।

मनोविज्ञान को अंग्रेजी में Psychology कहते हैं, जो कि ग्रीक शब्द Psyche और Logos से मिलकर बना है । मनोविज्ञान का अर्थ आत्मा के अध्ययन से लिया जाता था किंतु बाद में आत्मा की जगह मन शब्द का प्रयोग किया गया । इसलिए मन के ज्ञान को मनोविज्ञान कहा जाने लगा । मनोविज्ञान को परिभाषित करते हुए स्किनर कहते हैं, "जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के प्रति प्राणी की प्रतिक्रियाओं या व्यवहार का अध्ययन ही मनोविज्ञान है । प्रतिक्रियाओं, (प्रत्युत्तरों) या व्यवहार का अर्थ प्राणी की सभी प्रकार की प्रतिक्रियाओं, समायोजन, कार्य-व्यापारों (अनक्रियाओं) और अभिव्यक्तियों से है"[1]।

(डॉ. प्रीति वर्मा, डॉ. डी. एन. श्रीवास्तव, आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, पृ. 11, (R.S.Worth – Psychology, 1954)

वैलेन्टाइन के अनुसार, "मनोविज्ञान मन का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाला विज्ञान है जिसमें केवल बौद्धिक तत्त्वों का ही नहीं भावात्मक अनुभवों, प्रेरक शक्तियों, क्रिया-कलापों तथा व्यवहार का भी अध्ययन सम्मिलित है"[2]।

(गणपति चन्द्र गुप्त. रस सिद्धांत का पुनर्विवेचन. पृ. 204.)

कालिन्दी महाविद्यालय तथा रामानुजन कॉलेज के संयुक्त तत्त्वाधान में आयोजित FDP में दिनांक 04.08.20 को मनोवैज्ञानिक प्रो. आनंद प्रकाश अपने व्याख्यान में 'साहित्य और मनोविज्ञान में अंतर्संबंध' बताते हुए कहते हैं कि " 'मनोविज्ञान साक्ष्य प्रधान होता है, वह तर्कबुद्धि को स्पर्श करता है और साहित्य लालित्य प्रधान है, वह भाव बुद्धि को स्पर्श करता है । दोनों का संबंध व्यक्तिगत सत्य से होता है जो दूसरों तक पहुँचाते हैं । साहित्य में व्यक्तिगत सत्य समष्टिगत सत्य बन जाता है'" । इसलिए यह कहा जा सकता है कि मनोविज्ञान साहित्य के माध्यम से विस्तार पा जाता है, वह साहित्य के माध्यम से सिर्फ तथ्यात्मक नहीं रह जाता बल्कि व्यावहारिक बन जाता है ।

साहित्य और मनोविज्ञान का अंतर्संबंध तीन स्तरों पर देखा जा सकता है –

1. साहित्यकार का मनोविज्ञान

रेने वेलेक और आस्टिन वारेन की पुस्तक 'साहित्य-सिद्धांत' के अनुसार साहित्यिक प्रतिभाशाली के लिए "ग्रीक काल से ही लोग सोचते हैं कि इसका कुछ न कुछ संबंध पागलपन से अवश्य है – और पागलपन की इस परिधि में उन्माद (न्यूरोटिसिज्म) से लेकर विक्षिप्तता (साइकोसिस) तक समेटा जाता रहा है"[3]।

(वेलेक, रेने एवं आस्टिनवारेन. साहित्य-सिद्धांत. पृ. 106)

उन्होंने 'आविष्ट' और 'गढ़िया' कवि के दो प्रकार माना है, पहला कवि एक 'आविष्ट' प्राणी होता है, जो अपने अवचेतन अवस्था का उद्गार प्रकट करके दूसरों से कुछ कम होते हुए भी कुछ अधिक बढ़कर होता है । उनमें कविता स्वतः उपजती है, उन्हें कविता करने के लिए कोशिश नहीं करनी पड़ती । जैसे कि स्वच्छंदतावादी, अभिव्यंजनावादी और अतियथार्थवादी कवि । दूसरा, 'रचयिता' या 'गढ़िया' कवि, जिन्होंने कविता करने की कला सीखी होती हैं । वे 'करत-करत अभ्यास ते' के आधार पर एक प्रगल्भ, प्रशिक्षित एवं कविता का सूक्ष्म ज्ञान हासिल कर लेते हैं । जैसे – चारण परंपरा के कवि, पुनर्जागरणकाल और नव्यक्लासिकी, रीतिकालीन कवि ।

(वेलेक, रेने एवं आस्टिनवारेन. साहित्य-सिद्धांत. पृ. 112)

रचनाकारों अथवा कलाकारों के संबंध में साइकोएनालिसिस के लेखक और मनोविज्ञान के जनक फ्रॉयड का मन्तव्य बहुत साफ नहीं दिखाई देता, उनका कहना है, "कलाकार मूलतः एक ऐसा व्यक्ति है जो वास्तविकता की ओर से अपना मुँह मोड़ लेता है क्योंकि उससे अपनी वासनाओं की तुष्टि का परित्याग करने की जो माँग की जाती है उसे वह स्वीकार नहीं कर पाता और जो इसके बाद अपने कल्पना विलास में अपनी कामुक भावनाओं को खुली छूट दे देता है" | *(वेलेक,रेने एवं आस्टिनवारेन. साहित्य-सिद्धांत. पृ. 108)*

रचनाकार रचना में कल्पना का समन्वय कर अपने विकृत्तियों को ही विषय-वस्तु बनाकर अपने स्वप्न का विस्तार कर देता है । एरिक जेन्श रचनाकार अथवा कलाकार के इस क्षमता को प्रत्यक्षानुभूत और संकल्पनाजन्य का विशेष ढंग से एकीकरण मानते हैं । उनका मानना है कि रचनाकार अपने जातीय लक्षणों जिन्दा रखता है और उसके विकसित कर अनुभव ही नहीं करता बल्कि उसे प्रत्यक्ष रूप से देख भी सकता है । *(वेलेक, रेने एवं आस्टिनवारेन. साहित्य-सिद्धांत. पृ. 110)*

सिगमंड फ्रॉयड के बाद मनोविज्ञान के सशक्त हस्ताक्षर अल्फ्रेड एडलर और युंग रचनाकार को मनस्तापी के मानते हैं । लेकिन दोनों में अंतर यह है कि एडलर रचनाकार को मनस्ताप से मुक्ति का मार्ग मानते हैं तो युंग रचनाकार के सर्जनात्मक शक्ति का परिणाम मनस्ताप को मानते हैं । इस आधार पर यदि मनस्ताप का परिणाम सकारात्मक हो तो व्यक्ति अथवा रचनाकार उच्च कोटि की रचनाएँ कर सकता है । उदाहरण के लिए अमेरिकी गणितज्ञ जॉन नैश को देखा जा सकता है, जो स्क्रिज़ोफेनिया से पीड़ित थे, किंतु उच्च कोटि के गणितज्ञ बनें । जिनकी जीवनी पर सन् 2001 में 'अ ब्युटीफुल माइंड' फिल्म बनी है ।

रचनाकार से संबंधित विचारों में कार्ल युंग का सिद्धांत अत्यंत महत्त्वपूर्ण है । 'अवचेतन मन के सम्भाग में सृजनशीलता की संभावनाएँ होती हैं' कहने वाले युंग का मानना है कि व्यक्ति के अवचेतन के नीचे शैशावस्था के रूद्ध अनुभवों का अवशेष दबा रहता है । जो लेखन के समय उभर कर सामने आता है । चिन्तन, अनुभूति, अंतःप्रज्ञा और संवेदन की प्रधानता के अनुसार लोगों के टाइप होते हैं, जो अंतर्मुखी और बहिर्मुखी दो प्रकारों के अंतर्गत आते हैं । लेखक वर्ग भी अलग-अलग टाइप के होते हैं और उनमें से कुछ अपने टाइप का उद्घाटन करते हैं तो कुछ विरोधी टाइप और अपने पूरक का । दूसरी बात कुछ लेखक में अंतर्मुखी और बहिर्मुखी दोनों होते हैं, वे विविधता और बहुलता भरे होते हैं, जैसे कि टी.एस. ईलियट, शेक्सपीयर, पो आदि और भारतीय कवियों में निराला और कुँवर नारायण को ले सकते हैं । *(वेलेक, रेने एवं आस्टिनवारेन. साहित्य-सिद्धांत. पृ. 111)*

निट्शे की पुस्तक द बर्थ ऑफ ट्रैजेडी (1872) में आधुनिक काल के विरोधी प्रवृत्तियों के कवियों का वर्णन पाया जाता है । फ्रान्सीसी मनोवैज्ञानिक राइबो ने बाह्य जगत् के पर्यवेक्षण से, प्रत्यक्षानुभूति से प्रेरित कवि और कल्पना तरल कवि दो प्रकार माने हैं । कीट्स का कवि के विषय में मानना है, "वह सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं होता है । ... वह इयागो की कल्पना करते हुए भी उतना ही हर्षित होता है

जितना किसी इमोगेन की कल्पना करते समय ।... दुनियाँ में कवि से अधिक अकाव्यात्मक कोई चीज़ नहीं हो सकती, क्योंकि उसका अपना कोई 'स्वरूप' नहीं होता – वह निरंतर किसी अन्य को भरता-पूरता रहता है" ।

(वेलेक, रेने एवं आस्टिनवारेन. साहित्य-सिद्धांत. पृ. 110)

देखा जाय तो कीट्स के विचार सिर्फ काव्य के लिए ही नहीं गद्य विधा में कथाओं के लिए भी कुछ हद तक सटिक बैठता है । क्योंकि रचनाकार कथा-कहानी लिखते समय अपने शरीर में होते हुए भी कल्पना के माध्यम से दूसरों के शरीर में प्रवेश कर जाता है, जिसे तदानुभूति की संज्ञा दी जाती है । वह रचना प्रक्रिया के समय एक साथ कई-कई जिन्दगियाँ जीता है । और शब्दों के माध्यम से सूक्ष्म कल्पना को मूर्त कर देता है ।

2. साहित्य में मनोविज्ञान

साहित्य में मनोविज्ञान दो रूपों में देख सकतें हैं । **पहला,** वे रचनाएँ जो मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार बनाकर लिखी जाती हैं अथवा मनोवैज्ञानिक उपकरण समाहित होते हैं । इसलिए उन रचनाओं के अध्ययन का विषय मनोविश्लेषणात्मक होती है । उदाहरण के लिए जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' और अज्ञेय की कविताएँ । मनौवैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित कहानियों में प्रेमचंद की कुंठा, हीनता ग्रंथि पर आधारित 'कफन', अवचेतन मन को खूबसूरती से उभारने वाले प्रसाद की 'पुरस्कार', 'मधुवा', 'ममता', जैनेन्द्र की यौन कुंठा, अंतर्द्वन्द्व पर आधारित 'ध्रुवयात्रा', 'एक रात', 'नीलम देश की राजकन्या', 'एक पन्द्रह मिनट', फ्रॉयड के सिद्धांतों पर आधारित तथा असामान्य मनोग्रंथियों पर इलाचन्द्र जोशी की 'यज्ञ और जागृति', 'विद्रोह', 'परित्यक्ता', अज्ञेय की 'पुरूष के भाग्य', 'रोज', मनस्ताप पर आधारित कमलेश्वर की 'राजा निरवंसिया', यौन कुंठा, पीडा एवं अंतर्द्वन्द्व पर आधारित कमला दत्त की 'मछली सलीब पर टंगी', 'अच्छी औरतें', 'तीन अधजली मोमबत्तियाँ', शरीर में कैमिकल परिवर्तन की वजह से मानसिक बदलाव पर आधारित सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'आग गर्मी कम क्यों है', विवेक मिश्र की कहानी 'सुसाइड क्लब', 'गुब्बारे', 'निर्भया नहीं मिली', 'कारा' कहानियाँ, यौन कुंठा पर आधारित तेजेन्द्र शर्मा की 'अपराध-बोध का प्रेत', 'कल फिर आना', सुरज प्रकाश की 'लहरों की बाँसूरी' आदि

उपन्यासों में जैनेन्द्र की 'सुनीता', 'परख', इलाचन्द्र जोशी के 'संन्यासी', 'प्रेत और छाया', 'निर्वासित', अज्ञेय की 'शेखरः एक जीवनी', 'नदी के द्वीप' सुनीता जैन का 'बिन्दू', 'अनुगूँज', भगवती प्रसाद वाजपेयी का 'निमंत्रण', गिरिराज किशोर की 'यात्राएँ', राजकमल चौधरी की 'मछली मरी हुई', धर्मवीर भारती की 'गुनाहों का देवता', अन्नपूर्णा देवी का 'परत दर परत', मृदुला गर्ग की 'चित्तकोबरा', सुषम वेदी की 'नवाभूम की रसकथा', सुदर्शन प्रियदर्शिनी का 'पारो' आदि मनोवैज्ञानिक कसौटी पर खरे उतरते हैं ।

निबंधों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंधों का मूल्यांकन मनोविज्ञान को समझे बिना नहीं हो सकता ।

कुछ लेखक अपनी रचना का पैटर्न भी मनोविज्ञान के किसी एक सिद्धांत के आधार पर अपना लेते हैं, जैसे कि प्रवासी साहित्यकार तेजेन्द्र शर्मा की अधिकतर कहानियों का पैटर्न 'प्रतिक्रिया-निर्माण' (Reaction Formation) पर आधारित है, जो कि 'अहं रक्षात्मक प्रक्रम' (Ego Defense Mechanism) का एक प्रकार है । उन्होंने अहं रक्षात्मक प्रक्रम का एक प्रकार 'प्रक्षेपण' (Projection) का भी प्रयोग किया है । प्रवासी साहित्यकार सुधा ओम ढींगरा की कहानियों में मनःसंवेगों का सहजता के साथ सफलतापूर्वक विलय होता है । सुदर्शन प्रियदर्शिनी का उपन्यास 'पारो' व्यामोह में फँसी नायिका को दर्शाता है, हालांकि इनकी कथाएँ दुखान्तक होती हैं लेकिन 'पारो' सुखान्तक है । सुषम वेदी का उपन्यास अहं और अस्तित्वाद को प्रमुखता देने वाला 'नवाभूम की रसकथा' में भाव और बुद्धि की टकराहट दिखाई देती है ।

दूसरा, वे रचनाएँ जिनमें मनोवैज्ञानिक उपकरण प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देतें किंतु उन रचनाओं का संबंध मनोविज्ञान से होता है । क्योंकि रचना करने अथवा लिखने के लिए अभिप्रेरित करने वाले कारक तथा सम्पूर्ण रचना-प्रक्रिया एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है । वे रचनाएँ सामाजिक, मार्क्सवादी, भाषिक अथवा अस्मितामूलक विमर्शों आदि से संबंधित क्यों न हों, किंतु उनका अप्रत्यक्ष संबंध मनोविज्ञान से ही है ।

भारतीय साहित्य में यदि प्रथम ग्रंथ भरतमुनि का नाट्यशास्त्र को लिया जाए तो नाट्यशास्त्र में रस-सिद्धांत का सीधा संबंध मनोविज्ञान से दिखाई देता है । आचार्य भरतमुनि ने आठ रसों का वर्णन किया था किंतु बाद इन रसों की संख्या ग्यारह हो गई, उनके स्थायी भावों (रति, शोक, भय, हास, उत्साह, क्रोध, जुगुप्सा, विस्मय, निर्वेद, वात्सल्य, भगवत्प्रेम) को मनोविज्ञान में मनःसंवेग कहते हैं ।

रस सिद्धांत के पुनर्विवेचन में इनके संबंध की तालिका को कुछ इस प्रकार दिया गया है ।

सहज प्रवृत्तियों, भावनाओं एवं मूलभावों का पारस्परिक संबंध

क्र. सं.	सहज-प्रवृत्ति	भावनाएँ एवं भावात्मक प्रवृत्तियाँ	मूलभाव या स्थायी भाव
1.	काम प्रवृत्ति	प्रणय भावना	काम (रति) या प्रणय
2.	युयुत्सा की प्रवृत्ति	द्वेष, प्रतिशोध, क्रांति विद्रोह आदि की भावनाएँ	क्रोध
3.	पलायन की प्रवृत्ति	भीरूता	भय
4.	शरणागति-प्रदान की वृत्ति	सहानुभूति, करूणा	शोक (करूणा)

5.	हास्य की प्रवृत्ति	विनोद, उपहास, व्यंग्य	हास्य
6.	विकर्षण की प्रवृत्ति	घृणा	घृणा
7.	जिज्ञासा की प्रवृत्ति	जिज्ञासा, कौतुहल	आश्चर्य
8.	आत्मदैन्य की प्रवृत्ति	भक्ति भावना	भक्ति
9.	संतति पालन की प्रवृत्ति	वात्सल्य, स्नेह, करूणा	वात्सल्य
10.	संग्रह-वृत्ति / आत्मगौरव की वृत्ति	अधिकार भावना	उत्साह
11.	साहचर्य की प्रवृत्ति	सख्य, मैत्री	सख्य
12.	चिंतन की प्रवृत्ति (नवोन्मेषण की प्रवृत्ति)	निर्वेद	निर्वेद

(डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त, रस सिद्धांत का पुनर्विवेचन. पृ. 228)

मैक्डूगल ने प्राणियों के अंदर चौदह प्रकार की मूल प्रवृत्ति (शिशु रक्षा, योधन, उत्सुकता, भोजनान्वेषण, विकर्षण, पलायन, युथचारिता, आत्म-प्रकाशन, आत्मवश्यता, संग्रह, यौन-प्रवृत्ति, रचना-प्रवृत्ति, शरणागत होना, हास) माना है जिसका संबंध आवेग मनोवेग (वात्सल्य, क्रोध, आश्चर्य, क्षुधा, घृणा, भय, अकेलापन, उत्साह, आत्महीनता, अधिकार का भाव, काम-भाव, रचनात्मक आनंद, करूणा, आमोद) से माना है।

स्थायी भाव के अतिरिक्त अन्य रस-सामग्रियों जैसे कि विभाव (आलम्बन और उद्दीपन विभाव), अनुभाव (कायिक, वाचिक, मानसिक, आहार्य, सात्विक), संचारी अथवा व्याभिचारी भाव (हर्ष, विषाद, त्रास, लज्जा, ग्लानि, चिंता, शंका, असूया, अमर्ष, मोह, गर्व, औत्सुक्य, उग्रता, चपलता, दैन्य, जड़ता, आवेग, निर्वेद, धृति, मति, विवोध, वितर्क, श्रम, निद्रा, आलस्य, स्वप्न, स्मृति, मद, उन्माद, अवहित्था, अपस्मार, व्याधि, मरण) मन या चित्त से संबंध रखते हैं, जो अनुकूल वातावरण में जागृत हो उठते हैं ।

काव्य की प्रक्रिया मूलतः मनोविज्ञान का हिस्सा है ही, इनमें से भक्तिकालीन, छायावादी रचनाएँ आज तक सबकी स्मृत्तियों का हिस्सा हैं और इन पर मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि से अध्ययन किया जा चुका है और होता रहता है ।

कहानियों में उदाहरण के लिए प्रेमचंद की कहानी 'बड़े घर की बेटी' में सामाजिक उपकरण मिलेंगे न कि मनोवैज्ञानिक । किंतु युंग की सामूहिक अवचेतन पर दृष्टि डालें तो उस समय के अनुकूल और मनोसामाजिक संरचना के कारण वह कहानी उस समय के लिए अत्यंत प्रासंगिक कहानी है । किंतु

आज के समय (स्थान विशेष को छोड़ कर) में यह कहानी अप्रासंगिक है । उसी प्रकार उनकी कहानियों (ईदगाह, पूस की रात आदि) या उपन्यासों (गोदान, गबन, निर्मला) में प्रत्यक्ष रूप से मनोवैज्ञानिक उपकरण नहीं दिखाई देते हैं, उसके बावजूद भी उनकी कहानियों और उपन्यासों का अध्ययन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किया जाता है । इसी प्रकार अमृतलाल नागर, मोहन राकेश, कमलेश्वर, उषा प्रियंवदा आदि की रचनाओं का भी अध्ययन किया जाता है ।

रचनाओं पर बात करते हुए अस्मितामूलक विमर्श को नहीं भूलना चाहिए । अस्मितामूलक विमर्श के अंतर्गत स्त्री-विमर्श को समझने के लिए मनोविश्लेषणवादी धारा की इरिगेरे आदि के सिद्धांतों के समझते हुए भी युंग और एडलर के सिद्धांतों को नकार नहीं सकते । सी. जी. युंग ने अवचेतन मन अथवा चित्त को दो भागों में विभाजित किया है - मन का ऊपरी सतह, 'व्यक्तिगत अवचेतन' कहलाता है जो व्यक्ति के दैहिक जीवन से जुड़े भूतकालीन समाज द्वारा असंगत इच्छाओं का दमित एवं उपेक्षित एवं विस्तृत स्वरूप है । दूसरा मन का भीतरी सतह, जिसे 'सामूहिक अवचेतन' कहते हैं । उसमें व्यक्ति की पारिवारिक यानि पूर्वजों, प्रजाति, आदिम समूहों, जाति, धर्म, संस्कृति के भूतकालीन विस्मृत अनुभव बीजों का अव्यवस्थित भंडार होता है । मन के भीतरी सतह से ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का विस्तार होता है । उसकी सोच-समझ, सफलता-असफलता उसी पर निर्भर होती है । जब स्त्री-विमर्शी लेखन को जातीय स्मृति पर आधारित कहते हैं, तब युंग के इन सिद्धांतों पर विचार करना जरूरी हो जाता है ।

स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, आदिवासी विमर्श या थर्ड जेण्डर विमर्श आदि किसी भी विमर्श को देखे तो युंग के सिद्धांतों के साथ एडलर के अधिकार भावना पर दृष्टिपात करना जरूरी हो जाता है । अस्मितामूलक सभी विमर्श मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड एड़लर के "वैयक्तिक मनोवज्ञान" के अंतर्गत अधिकार भावना के माध्यम से समझा जा सकता है । "एडलर अपनी पुस्तक 'द प्रेक्टिस एंड थियरी ऑफ इंडिव्युज़ल साइकोलॉजी' में प्रत्येक मनस्ताप को श्रेष्ठता की भावना की प्राप्ति के लिए, हीनता की भावना से मुक्ति का प्रयास समझते हैं और वे कहते हैं, "हीनता की भावना ही अतिवादी स्थिति में हीनता ग्रंथि (इनफिरियारिटी कॉम्पलेक्स) का रूप धारण करती है । अपने को प्रत्येक से श्रेष्ठ समझने की भावना अतिचार श्रेष्ठता ग्रंथि (सुपीरिआरिटी कॉम्पलेक्स) को जन्म देता है । हीनता-ग्रंथि अथवा श्रेष्ठता-ग्रंथि विरोधी दृष्टिगत होने पर भी विरोधी नहीं होतीं – वे एक दूसरे की पूरक होती हैं । एक ही व्यक्ति में ये दोनों ग्रंथियाँ पाई जाती हैं । हीनता की ग्रंथि को व्यक्ति श्रेष्ठता भावना में बदलना चाहता है" । (https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/227701/6/06_%20chapter%201.pdf *अवचेतन प्रभावों की रूपात्मकता : तथ्य, परिभाषा एवं विश्लेषण)*

एडलर वैयक्तिक मनोविज्ञान की बात करते हुए भी व्यक्ति को समाज के परिप्रेक्ष्य में देखते हैं । इसलिए समाज में अधिकार भावना अस्मितामूलक साहित्य का महत्वपूर्ण हिस्सा है । क्योंकि हाशिए पर खड़े सबकी लड़ाई अधिकारों के लिए ही है ।

3. पाठक का मनोविज्ञान

युंग के अनुसार, *"भाव व्यक्ति की तीव्र अव्यवस्थित (या उद्दीप्त) मानसिक अवस्था है"* ।

(रस सिद्धांत का पुनर्विवेचन – डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त. पृ. 211. (Emotions in man and Animal : P.T. Young, Page-51.)

जिसे रचनाकार अपनी रचनाओं में कल्पना के साथ सतर्क व्यवस्थित करने का प्रयास करता है । यह अवचेतन मन से चेतन मन बनने की एक क्रिया है । चेतन बनाने में बिम्ब-प्रतीक सशक्त हथियार होते हैं ।

किंतु जब पाठक किसी रचना को पढ़ता है तो उसकी प्रक्रिया लेखक की प्रक्रिया से ठीक उल्टी होती है । वह चेतन से अवचेतन की ओर उन्मुख होता है । फ्रॉयड के जिस स्वप्न का विस्तार कल्पना के माध्यम से लेखक कर चुका होता है उसे पाठक पुनः अपनी कल्पना में बाँधता है और उसके बाँधने के साथ अपने स्वप्न का विस्तार करता है । रचना में उद्धृत बिम्ब-प्रतीक पाठक के स्मृत्ति का हिस्सा बन जाते हैं तथा पाठक के अनुभव संसार के साथ मिलकर पात्रों को अथवा दृश्य को सजीव बनाते हैं । इस प्रक्रिया को समझने में युंग का सामूहिक अवचेतन का सिद्धांत सहायक होगा ।

चूंकि पाठक भी इसी समाज का सदस्य होता है । लेखक के अंदर जो मनोवृत्तियाँ, मनःसंवेग विद्यमान हैं वही मनोवृत्तियाँ तथा मनःसंवेग कुछ अलग अथवा उन्हीं के समान पाठक में भी विद्यमान होती हैं । यदि पाठक स्वयं भी लेखक है तो वह उस रचना के माध्यम से अपने स्वप्न का और भी विस्तार कर सकता है किंतु यदि पाठक आम पाठक है तो वह अपनी स्मृत्तियों से पाठ को जोड़ते हुए लेखक से भिन्न विस्तार को गढ़ता है अथवा अपनी अनुभूति को दुहराता है । ऐसे में पाठक पर कर्ता-प्रेक्षक प्रभाव (Actor-observer effect) पड़ता है, वह पाठ पढ़ते समय पात्रों में अपने को गुणारोपण करके देखता है । इसे दूसरे शब्दों में कहें तो पाठक पाठ में उद्धृत घटनाओं को अपने अनुभव के साथ जोड़ कर देखता है, जिसके जैसे अनुभव (सुखात्मक या दुखात्मक) हैं उसकी संवेदनाएँ उन घटनाओं के साथ जुड़ जाती हैं, जिसे मनःसंवेगों का तादात्मीकरण कह सकते हैं । यही कारण है कि हर लेखक का अपना पाठक वर्ग होता है तथा रचना के प्रति सभी पाठकों का अपना अपना दृष्टिकोण बन जाता है । एक ही रचना किसी को अधिक प्रभावित करती है तो किसी को कम । उदाहरण के लिए वीरगाथात्मक रचनाएँ पढ़ने पर पाठक के अंदर उत्साह से उत्तेजित होना, प्रेमपरक रचनाएँ पढ़ने पर काम अर्थात प्रणय भाव का जागृत होना तथा अस्मितामूलक साहित्य पढ़ने पर अपने अधिकारों के प्रति सचेत होना आदि देखा जा सकता है ।
अस्मितामूलक साहित्य को समझने के लिए युंग और एडलर दोनों के सिद्धांत सहायक होते हैं ।
युंग के अनुसार व्यक्ति में जो घटित होता है वही समष्टि में भी घटित होता है । इस प्रकार लेखक व्यक्ति से समष्टि की ओर आगे बढ़ता और पाठक समष्टि से व्यक्ति को ओर लौटता है । लेखक और पाठक दोनों ही समाज का हिस्सा हैं इसलिए दोनों के मनःसंवेग में तादात्मीकरण स्वाभाविक है । इस सिद्धांत को भारतीय काव्यशास्त्र में साधारणीकरण कहते हैं ।

निष्कर्ष – साहित्य और मनोविज्ञान दोनों का अपना-अपना महत्त्व है। किंतु साहित्य-सृजन मनोविज्ञान की भूमिका बिना संभव नहीं है अथवा कह सकते हैं कि साहित्य का अस्तित्व मनोविज्ञान के बिना संभव नहीं हो सकता किंतु मनोविज्ञान का अस्तित्व साहित्य के बिना हो सकता है ।

सदर्भ-ग्रथ सूची –

1. फ्रॉयड, मनोविश्लेषण, सं. 2004. राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली.
2. रेने वेलेक एवं आस्टिनवारेन, साहित्य-सिद्धांत, सं. 2000, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद.
3. डॉ. प्रीति वर्मा, डॉ. डी. एन. श्रीवास्तव, आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, तेरहवाँ 2005, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा.
4. डॉ. देवराज उपाध्याय, आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान, सं. द्वितीय, 1963 इसवी. साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद.
5. डॉ. पद्मा अग्रवाल, मनोविज्ञान और मानसिक क्रियाएँ, सं. द्वितीय, 1955, मनोविज्ञान प्रकाशन, बनारस.
6. गणपति चन्द्र गुप्त, रस सिद्धांत का पुनर्विवेचन, सं. द्वितीय, 1998, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद.
7. http://www.ignited.in/I/a/200773. (मनोविज्ञान और हिन्दी कथा साहित्य – शिक्षा रानी)
8. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/92659/6/06_chapter-1.pdf (मनोविज्ञान का स्वरूप एवं परिभाषा चरित्र का स्वरूप एवं परिभाषा)
9. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/227701/6/06_%20chapter%201.pdf (अवचेतन प्रभावों की रूपात्मकता : तथ्य, परिभाषा एवं विश्लेषण)
10. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/93506/8/08_chapter%203.pdf (हिन्दी उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक उपन्यासों पर विविध विचारधाराओं का प्रभाव)

****